© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

पूर्व मध्यकालीन इतिहास में स्त्रियों की स्थिति एक अध्ययन

डॉ0 विनोद कुमार यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर,
आदर्श कृष्ण पी0जी0 कालेज शिकोहाबाद

भारतीय शास्त्रों में यह सुस्थापित है कि पारिवारिक सुख–शांति, संतुलन एवं स्नेह की दृष्टि में पुत्र और पुत्री में कोई भेद नहीं होना चाहिये। किन्तु यदि वास्तविकता और सामाजिक स्तर की दृष्टि से पूर्व मध्यकालीन साहित्य का विवेचन किया जाये तो निश्चित रुप से पुत्र और पुत्री की स्थिति में अन्तर परिलक्षित होता है। किसी भी देश की शिक्षा–प्रणाली वहाँ की सांस्कृतिक परम्पराओं एवं जन–जीवन की जागृति पर निर्भर करती है। देश की भौतिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रगति भी वहाँ की शिक्षा पर ही निर्भर होती है। विश्व की अन्य सभ्यताओं का इतिहास देखने पर हम देखते हैं कि प्राचीन काल में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति, सन्तोषजनक नहीं थी। परन्तु इसके विपरीत जब हम भारतीय इतिहास के समाज के विषय में अध्ययन करते हैं, तो देखते हैं कि भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही स्त्रियों की सामाजिक दशा सन्तोषजनक थी। उन्हें शिक्षा विवाह सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे। और इस प्रकार अनेक गुणों से युक्त होने के कारण उनका चित्रण आदर्श के प्रतीक रुप में भी मिलता है। पुरुषों की भाँति वे भी ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कर सकती थी। एवं उच्च शिक्षा ग्रहण कर सकती थी। भारतीय शिक्षा का इतिहास स्त्री–शिक्षा के अध्ययन के बिना पूर्ण नहीं होता।

इस काल में राजनैतिक परिवर्तनों के साथ–साथ सामाजिक परिवर्तन भी हुआ। सम्पूर्ण कर्मकाण्ड जटिल होने लगा था। वर्णव्यवस्था में अनेक उपजातियों के योग से उसमें भी जटिलता और रुढ़िवादिता बढ़ने लगी, जिसका दुःप्रभाव न केवल पुरुष वर्ग के क्रिया–कलापों के दायरे पर पड़ा, बल्कि स्त्रियों की गतिशीलता पर भी पड़ा। बालिकाओं के जन्म के सम्बन्ध में एक सामान्य धारणा यह रही है कि उनके जन्म पर प्रसन्नता नहीं होती थी। किन्तु स्कन्द पुराण के एक प्रसंग में एक बालिका दस पुत्रों के समान मानी गयी है । ऐसी स्थिति में वह उपेक्षित ही रही हो ऐसा सम्भव नहीं है सामान्य रुप से उच्च दार्शनिक शिक्षा एवं वैदिक अध्ययन, यज्ञों में भाग लेने का उल्लेख बहुत कम प्राप्त होते है। दूसरी ओर अन्य बहुत से विषयों ललित कलाओं आदि का उल्लेख मिलता है, जिनका स्त्रियों को ज्ञान कराया जाता था। वैदिक काल में वेद ही अध्ययन के प्रमुख विषय थे। स्त्रियों को भी समान रुप से वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त था। वे अपने पतियों के साथ यज्ञ में भाग लेती थी एवं उन्हीं के समान वैदिक मंत्रों का उच्चारण करती थी। स्त्रियाँ केवल अध्ययन ही नहीं अध्यापन का कार्य

भी करती थी। विदुषी स्त्रियाँ विद्वान पुरुषों के मध्य विंख्यात थी, उनका उतना ही सम्मान होता था, जितना पुरुषों का। इस काल में स्त्री–शिक्षा का पर्याप्त प्रचार था। स्त्रियाँ वाद–विवाद में भाग लेती थी एवं साहित्य के सृजन में योगदान देती थीं। इन बदलती हुई परिस्थितियों का प्रभाव स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था पर पड़ना स्वाभाविक था। कन्या प्राचीन काल से ही उपेक्षा की पात्र थी, तथा पूर्व मध्यकाल के आगमन तक पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों के लिए दुःख का कारण बन गई। वैदिक कालीन समाज में पुत्री के जन्म पर दुःखी होने का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अपितु तत्कालीन ग्रन्थों में ऐसे धार्मिक कृत्यों का उल्लेख मिलता है। जिनका उद्देश्य विदुषी प्राप्त करना था। किन्तु यह एक बड़ी बिडम्बना है कि बदलते हुये सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिवेश के कारण कालान्तर में पुत्री का जन्म परिवार के लिये दुःखदायी माना जाने लगा। विलासिता की प्रवृत्ति बढ़ने और यवन, शक, हुण, आदि के सम्पर्क में आने के पश्चात् बाल–विवाह की प्रथा को प्रोत्साहन मिला। पितृ–कुल और श्वसुर कुल दोनों में स्त्रियों पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगाये जाने लगे। पूर्व मध्यकाल में राजपूतों एवं कुछ अन्य जातियों में दहेज प्रथा के कारण बालिका वध की दारुण परिपाटी को भी प्रोत्साहन मिला। इस्लामी प्रभाव और स्त्रियों की सुरक्षा की दृष्टि से प्रदा–प्रथा अधिक प्रचलित होने लगी एवं स्त्रियों के धार्मिक अधिकार कम होने लगे। पूर्वकाल में बालकों की भांति बालिकाओं के उपनयन का उल्लेख मिलता है। उपनयन गुरु के निकट रह कर वैदिक शिक्षा प्राप्त करने का प्रतीक–स्वरुप था। जैसे–जैसे उपनयन का महत्व कम होता गया स्त्रियों की शिक्षा वैसे–वैसे प्रभावित होती गयी। मनुस्मृति में लगलग 200ई0पू0 में कहा गया है, कि स्त्रियों का विवाह ही उनका उपनयन संस्कार है और पति सेवा ही गुरुकुल वास के समान पवित्र है। स्मृतियो के भाष्यकारों ने भी उपनयन संस्कार को स्त्रियों के लिये निषिद्ध बताया और साथ ही उन्हें शुद्रों की भाँति वेदोच्चारण और यज्ञादि कर्मो के लिये भी अयोग्य घोषित कर दिया अल्तेकर महोदय ने यहां तक लिखा है कि पांच सौ ई0पू0 से स्त्रियों का उपनयन समाप्त सा हो गया था। सोमदेव के अनुसार, स्त्रियों को शास्त्र की अधिक शिक्षा नहीं देनी चाहिये। स्वभावतः मनोरम उपदेश भी स्त्रियों को उसी प्रकार विनष्ट कर देता है जिस प्रकार तलवार पर पड़ी जल की बुंदे उस पर जंग लगाकर उसे नष्ट कर देती है। वैदिक काल में जब वैदिक और दार्शनिक अध्ययन ही शिक्षा के प्रधान अंग थे, बालक और बालिकाओं का उपनयन संस्कार समान रुप से होता था। अर्थर्ववेद में स्त्रियों को उपनयन संस्कार नियम पूर्वक ब्रह्मचर्य पालन करते हुये दिखाया गया है। हारिति ने दो प्रकार की स्त्रियों का उल्लेख किया है (1) सद्योवधू जो शीघ्र ही पत्नी हो जाया करती थी। (2) ब्रह्मवादिनी जो वैदिक अध्ययन करती थी एवं उनका विधिवत उपनयन संस्कार किया जाता था। हारिति ने पुनः स्त्रियों के समावर्तन संस्कार का उल्लेख किया है। वस्तुतः जब समावर्तन होता था तो स्त्रियों के उपनयन का विधान भी अवश्य ही रहा होगा। मनीषियों के विचारों से प्रतीत होता है कि बदलते हुये परिवेश में स्त्री–शिक्षा को ही सबसे अधिक आघात पहुंचा। किन्तु पूर्णरुप से उन्हें शिक्षा सम्बन्धी अधिकारों से वंचित नहीं कर दिया गया। देवी भागवत पुराण में स्त्रियों के लिये आजीवन कौमार्थ व्रत की चर्चा की गयी है कथा सरित्सागर में भी ब्रह्मचारिणी स्त्रियों का उल्लेख है। सातवीं शताब्दी में वाणभट्ट की कादम्बरी में महाश्वेता के

शरीर को यज्ञोंपवीत धारण करने से पवित्र बताया गया है। मनु के नियम से उपनयन में बाधा अवश्य पड़ी परन्तु उसके बाद स्त्रियों के उपनयन को पूर्ण रुप से अस्वीकार करना उचित नहीं होगा, यज्ञोपवीत की धारणा का उदाहरण अन्य जगह नहीं मिलता है। इससे अनुमान होता है कि इस समय तक उपनयन पूर्णतया लुप्त तो नहीं हुआ था परन्तु इसकी प्रथा बहुत ही कम हो गयी थी। आठवीं शताब्दी के स्मृतिकार यम ने स्त्रियों के उपनयन पर पुनः प्रकाश डाला है। यम के अनुसार स्त्रियों का उपनयन तो हो सकता था परन्तु उनके लिये ब्रह्मचारी की पुरुषोचित वेशभूषा एवं शिक्षाटन का निषेध था। स्त्रियों के लिये शिक्षा का क्षेत्र केवल अपने ही घरों तक सीमित था। 9वीं शताब्दी में मनु पर मेधातिथि के महाभाष्य से स्त्रियों के उपनयन संस्कार में पुनः प्रतिरोध उत्पन्न हुआ। मेधातिथि के अनुसार स्त्रियों का विवाह संस्कार ही उपनयन के समान पवित्र होने से इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि उपनयन के उपदेश की पूर्ति विवाह संस्कार द्वारा हो जाती थी । स्त्रियों के गृह–कार्य मेधातिथि ने अन्तेवासी के समिधा एकत्र करने के समान ही आवश्यक बताया मनुस्मृति पर बाद के नारायण गोविन्द आदि अन्य टीकाकारों ने भी मेधातिथि के मत का ही समर्थन किया है। क्षेमेन्द्र के वृहत्कथा मंजरी से ज्ञात होता है कि स्त्रियां वैदिक क्रियायें करती थी। इन क्रियाओं का अधिकार उपनयन संस्कार के वाद ही प्राप्त होता है। 12वीं शताब्दी में लक्ष्मीधर ने भी स्त्रियों के उपनयन संस्कार को अस्वीकार करना उचित नहीं समझा, उनके अनुसार बालक या बालिका को संस्कार द्वारा शुद्ध करना परिवार के सदस्यों का कर्तव्य था। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उपनयन संस्कार स्त्रियों का यदा–कदा सम्पन्न होता था। सम्भवत् उच्च वर्ग राज परिवारों में यह परम्परा अभी बनी हुई थी। इस काल में स्त्रियों को सह–शिक्षा के अनेक उल्लेख प्राप्त होते है। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि उच्च वर्ग और राजघरानों की बालिकायें विद्यालय या शिक्षकों के घर जाती थी, और बालकों के साथ अध्ययन करती थी। बंगाल के राजा गोविन्दचन्द्र (11वीं शदी) की माता ने किसी विद्यालय में शिक्षा प्राप्त किया था। क्योंकि वह स्वयं कहती है– '' जब एक दिन मै पाठशाला से लौट रही थी। पद्म पुराण में उल्लेख है कि राजकुमारी चित्तोत्सव अपने शिक्षक के घर अध्ययन करती थी।, जहां पिंगल पुरोहित का पुत्र भी पढ़ता था। भवभूति कृत मालती माधव (8वीं शताब्दी) नामक नाटक से ज्ञात होता है कि कामन्दक की शिक्षा–दीक्षा देवराट के साथ एक ही पाठशाला में हुई थी। भवभूति की ही रचना उत्तर रामचरित (8वी शताब्दी) में भी सह–शिक्षा का उल्लेख मिलता है। जिसमें कहा गया है कि आत्रेयी लव–कुश के साथ बाल्मीकि के आश्रम में शिक्षा ग्रहण करती थी। बंगाली लोक साहित्य से ज्ञात होता है कि एक राजकुमारी और एक कोतवाल का पुत्र साथ–साथ एक ही विद्यालय में अध्ययन करते थे। अल्तेकर ने भी सह– शिक्षा पद्धति की सीमित सम्भावनाओं का समर्थन किया है। अल्तेकर ने लिखा है कि पूर्व काल में परिवार ही शिक्षा के केन्द्र थे। बाद में शिक्षा विस्तृत हो जाने से केन्द्रों पर होने लगी। यद्यपि स्त्रियों के लिये ललित–कलाओं की शिक्षा की व्यवस्था घरों पर ही होती थी। किन्तु उच्च दार्शनिक शिक्षा घरों पर संभव नहीं थी। कभी–कभी स्त्री शिक्षिकाओं का भी उल्लेख मिलता है। जिन्हें ''आचार्य' कहते थे। अल्तेकर के अनुसार पुराणों में वर्णित सुजाता प्रमदवरा की कथाओं से ज्ञात होता है कि बालिकाओं का विवाह युवावस्था प्राप्त करने

पर होता था और वे पाठशाला में बालकों के साथ ही पढ़ती थी। स्त्रियां सह–शिक्षा की इस व्यवस्था से कितने प्रतिशत लाभ उठातीं थी, यह निश्चित रुप से नहीं कहा जा सकता। तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों में केवल बालकों की ही उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। बालिकाओं के लिये नहीं इस प्रकार स्पष्ट है कि आलोच्य काल में कुछ स्त्रियों को पुरुषों की भाँति उनके साथ शिक्षा ग्रहण करने का शुअवसर प्राप्त था, कितनी स्त्रियों को यह अवसर प्राप्त हुआ, यह बताना कठिन है। लेकिन इनकी संख्या कम थी। इस काल में स्त्रियाँ विभिन्न विषयों का अध्ययन करती थी। इनके लिये कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं निर्धारित होते थे फिर भी इस युग में स्त्रियों को समाज में 64 कलाओं का ज्ञाता होना आवश्यक माना जाता था। इन 64 कलाओं की उपयोगिता को बताया गया है इसके सम्बन्ध में कहा गया है, कि इन कलाओं के ज्ञान से प्रियजनों से वियोग की स्थिति में, विपत्ति में, अपरिचित स्थान पर ये स्त्रियां अपनी इन कलाओं के माध्यम से एक व्यवस्थित दिनचर्या के साथ सुखी रह कर जीवन यापन कर सकती है। ललितविस्तर से पता चलता है कि गोपा नामक राजकन्या अनेक विषयों में प्रवीण थी। इस काल में स्त्रियों को साहित्य, काव्य, लेखनकला, ज्योतिष, गृहविज्ञान, चिकित्साशास्त्र, अंकगणित, ललितकला, माल्यग्रन्थनकला, दर्शन, शिल्पकला तथा सैनिक व प्रशासनिक शिक्षा आदि विषयों में प्रवीण होने के विवरण प्राप्त होते है। नलचम्पू में दमयन्ती की शिक्षा के अन्तर्गत वीणावादन, द्यूतविधान, नृत्यगीत, चित्रकला, काव्य और उसकी आलोचना, कामकला, और चिकित्सा का उल्लेख है। तदयुगीन स्त्रियां वात्स्यायन का कामसूत्र, भरत मुनि का नाट्यशास्त्र, चित्रकारी पर विथाखिल तथा संगीत पर दन्तिल की पुस्तकों का अध्ययन कर अपनी प्रतिभा का विस्तार करती थी। काव्य मीमांसा से ज्ञात होता है कि अभिजात्य वर्ग में सुसंस्कृत स्त्रियां प्राकृत एवं संस्कृत में दक्ष होने के साथ–साथ काव्य, संगीत, नृत्य, वाद्य और चित्रकला में भी प्रवीण होती थी। पंचाशिका में एक राजकुमारी को साहित्य, अलंकार, नवरस, छन्दशास्त्र, काव्य, नाटक, ज्योतिष तथा कामशास्त्र, प्राकृत और संस्कृत भाषा के शात्रों की शिक्षा दिये जाने का उल्लेख है। इस युग में कतिपय संस्कृत संग्रहों में अनेक कवयित्रियों की उच्च कोटि की रचनायें उपलब्ध होती है। कल्हण के सूक्ति–मुक्तावली में विदर्भ की कवयित्री विजयांका सरस्वती का रुप कहा गया हैं जिसकी कीर्ति की समता केवल कालिदास कर सकते थे। भोज प्रबन्ध और प्रबन्ध चिन्तामणि सीता नामक कवयित्री का उल्लेख करते हैं, जिसने तीन वेद, रघुवंश, कामसूत्र एवं चाणक्य नीति का अध्ययन किया था। विजयांका की पहचान विज्जा विद्या या विजाका नामक कवयित्रियों में की गयी है जिसकी कवितायें अनेक ग्रन्थों में मिलती है। इसकी पहचान आठवीं शदी के शासक चालुक्य–राजा चन्द्रादित्य की पत्नी विजय भट्टारिका से भी की गयी हैं प्रबन्धकोष में एक राजकुमारी का उल्लेख है जिसने पाँच सौ श्लोकों की रचना की थी। कवयित्री शीला भट्टारिका की एक कविता मम्मट के काव्य प्रकाश में उद्धत है धनदेव में शीला भट्टारिका को सम्मान देने का उल्लेख प्राप्त होता है। राजशेखर ने इस कवयित्री की सरल एवं प्रवाह पूर्ण शैली की प्रशंसा की है तथा उसे बाणभट्ट के समतुल्य माना है। कश्मीर नृपति जयपीड का मंत्री वामन लगभग 8वीं शताब्दी ई0 के काव्यलंकार सूत्रवृत्ति में फालगुहस्तनी नामक कवयित्री की कविताओं का उल्लेख है। प्रबन्धचिन्तामणि से ज्ञात होता है कि भोज की समकालीन दासियां भी काव्य रचना में इतनी कुशल

होती थी कि किसी भी पद्यांश की पूर्ति शीघ्र ही कर देती थी। इससे तत्कालीन समाज में स्त्रियों की तीक्ष्ण बुद्धि एवं काव्य रचना के प्रति अनुराग का पता चलता है। ग्यारहवी शताब्दी में अल्बरुनी के कथन से स्त्रियों की सामान्य स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। उसके अनुसार परिवार की व्यवस्था और असाधारण स्थितियों में स्त्रियों का परामर्श बड़ी निष्ठा से लिया जाता था। उन्हें शिक्षा दी जाती थी एवं शिक्षिता की मर्यादा समाज में स्थापित थी।

संदर्भ

1. अल्तेकर, ए0एस0 –एजुकेशन इन एशियेन्ट इण्डिया, ।
2. ''दशपुत्र समा कन्या'' स्कन्दपुराण, ।
3. चौधरी, आर0के0 – वुमेन इन वैदिक रिचुअल्स, ।
4. अल्तेकर, ए0एस0 – दि पोजिशन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेश
5 वृहदारण्यक उपनिषद, 4.4.18।।
6 वेदालंकार, श्री हरिदत्त– हिन्दू परिवार मीमांसा, ।
7 मनु स्मृति, 2.67– **वैवाहिकों विधि : स्त्रीणां संस्कारो वैदिको मतः।**
पति सेवा गुरुवासो गृहार्थोग्नि परिक्रया।।
8 दास, आर0एम0 – वुमेन इन मनु एण्ड कमेष्टेटर्स,
9 नीतिवाक्यामृतम्, राजरक्षा समुदेश्य, श्लोक 43।
10 अथर्ववेद, 12, 5, 18। **''ब्रह्मचर्येण कन्यानं युवानं विन्दते पतिम्''**।
11. **द्विविधाः स्त्रियों ब्रह्मवादिनः सद्योवध्वश्च।**
तन्त्र ब्रह्मवादिनी नामुपनयनउनीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च शिक्षा चर्येति।।
वी0 मि0 सं0, पृ0 402 एवं स्मृति चंद्रिका,
12. वाणभट्ट – कादम्बरी, काउवेल का अंग्रेजी अनुवाद, ।
13 **स्वगृहे चैव कन्याया मैक्षचर्या विधीयते।**
वर्णयेद् अजिनंचरिम् जटा धारणाम् एवं च ।''
यम का वचन, वी0 मि0 सं0, पृ0 802
14 गुप्ता,टी0सी0 दास–एसपेक्टस आफ बंगाली सोसइटी, ।
15. मिश्र, केशवचन्द्र – चन्देल और उनका राजत्वकाल, ।

*****